RARE BOOK

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
राष्ट्रीय पुस्तकालय, कलकत्ता ।
NATIONAL LIBRARY, CALCUTTA.

वर्ग संख्या
Class No. H 891.22
पुस्तक संख्या
Book No. K 422
रा० पु०/ N. L. 38.

MGIPC--S4—9 LNL/66—13-12-66—1,50,000.

DHANANJAYA VIJAYA

SP 1/96

धनंजय विजय

व्यायोग

श्री नारायण उपाध्याय के पुत्र

श्री कवि कांचन

का

बनाया

हिन्दी भाषा के रसिकों के आनन्दार्थ

श्री हरिश्चन्द्र

ने

मूल गद्य के स्थान में गद्य और छन्द के स्थान में छन्द में

अनुवाद

किया



बनारस

मेडिकल हाल के छापेखाने में छापा गया।

सन् १८८३ ई०।

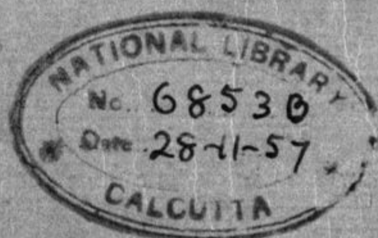
SHELF LISTED

H
891.22
K 422

प्यारे !

निश्चय इस ग्रन्थ से तुम बड़े प्रसन्न होगे क्योंकि अच्छे लोग अपनी कीर्ति से बढ़ कर अपने जन की कीर्ति से सन्तुष्ट होते हैं तो इस हेतु इस होली के आरम्भ के त्योहार माघी पूर्णिमा में हे धनंजय और निधनंजय के मित्र ! यह धनंजय विजय तुम्हें समर्प्पित है स्वीकार करो ।

तुम्हारा
ह—


NATIONAL LIBRARY
No. 68530
Date 28-11-57
CALCUTTA

॥ धनंजय विजय ॥

व्यायोग ।

(नान्दी आशीर्वाद पढ़ता है)

हरेर्लीलावराहस्य दंष्ट्रादण्डः स पातु वः ।
हेमाद्रिकलशा यत्र धात्री छत्रश्रियं दधौ ॥

सूत्रधार आता है

(चारो ओर देखकर) वाह वाह प्रातःकाल की कैसी शोभा है ॥

(भैरव)

भोर भयो लखि काम मात ओरकामिनि महलन जागीं ।
बिकसे कमल उदय भयो रवि को चकइनि अति अनुरागीं ॥
हंस हंसनी पंख हिलावत सोइ पटह सुखदाई ।
आंगन धाइ धाइ के भंवरी गावत केलि बधाई ॥

(आगे देखकर) आहा शरद रितु कैसी सुहानी है ॥

(भैरव) (वा ठुमरी)

सबको सुखदाई अति मन भाई शरद सुहाई आई ।
कूजत हंस कोकिला फूले कमल सरनि सुखदाई ॥ ॥
सूखे पंक हरे भए तरुवर दुरे मेघ मग भूले ।
अमल इन्दु तारे भए सरिता कूल कास तरु फूले ॥
निर्मल जल भयो दिसा स्वच्छ भई सो लखि अति अनुरागे ।
जानि परत हरि शरद विलोकत रतिश्रम आलस जागे ॥

(नेपथ्य की ओर देखकर) अरे यह चिट्ठी लिए कौन आता है

(एक मनुष्य चिट्ठी लाकर देता है)

(सूत्रधार खोलकर पढ़ता है)

"परम प्रसिद्ध श्रीमहाराज जयदेव जी

दान देन में समर में जिन न लही कहुं हारि।
केवल जग में बिमुख किय जाहि पराई नारि॥
जाके जिय में तूल सो तुच्छ होय निरधार।
खीझे अरि को प्रबल दल रीझे कनक पहार॥

वह प्रसन्न होकर रंगमंडन नामक नट को आज्ञा करते हैं॥

अलसाने कछु सुरत श्रम अरुन अधखुले नैन।
जगजीवन जागे लखहु दैन रमाचित चैन॥
शरद देखि जब जग भयो चहुंदिसि महा उछाह।
तौ हमहूं को चाहिए मंगल करन सचाह॥

इस्से तुम बीररस का कोई अद्भुत रूपक खेल कर मेरे गदाधर इत्यादि साथियों को प्रसन्न करो" ऐसा कौन सा रूपक है (स्मरण करके) अ[illegible] जाना॥

कवि मुनि के सब शिशुन कों धारि धाय सी प्रीति।
सिखवत आप सरस्वती नित बहु विधि की नीति॥
ताही कुल में प्रगट भे नारायण गुणधाम।
लह्यो जीति बहु बादिगन जिन बादीश्वर नाम॥
अभय दियो जिन जगत कों धारि जोग सन्यास।
पै भय इक रखिकों रही मंडल भेदन त्रास॥

तिनके सुत सब गुन भरे
कविवर कांचन नाम ।
जाकी रसना मंजुसाला
बिद्या गन की धाम ॥

तो उस कवि का बनाया धनंजय विजय खेलैं ॥
(नेपथ्य की ओर देखकर) यहां कोई है ॥

(पारिपार्श्वक आता है)

पा०। कौन नियोग है कहिए ॥
सू०। धनंजय विजय के खेलने में कुशल नटवर्ग को बुलाओ ॥
पा०। जो आज्ञा (जाता है)
सू०। (पश्चिम की ओर देखकर)
सत्य प्रतिज्ञा करन को छिप्यौ निसा अज्ञात ।
तेजपुंज अरजुन सोई रवि सो कढत लखात ॥

(विराट के अमात्य के साथ अर्जुन आता है)

अ०। (उत्साह से) दैव अनुकूल जान पड़ता है क्योंकि
जो औषध खोजत रहे मिलै सु पगतल आइ ।
बिना परिश्रम तिमि मिल्यौ कुरुपति आपुहि धाइ ॥
सू०। (हर्ष से देखकर) अरे यह श्यामलक तो अरजुन का भेस लेकर आ पहुंचा तो अब मैं और पात्रों को भी चलकर बनाऊं ॥

(जाता है)

॥ इति प्रस्तावना ॥

अ०। (हर्ष से)
गोरक्षन रिपुमानबध नृप बिराट को हेत ।

समर हेत इक बृहन्नल सब भांत मिल्यौ या खेत ॥

और भी

वहै मनोरथ फल सुफल वहै महोत्सव हेत ।
जो मानी निज रिपुन सों अपुनो बदलो लेत ॥

अमा॰ । देव यह आप के योग्य संग्राम भूमि नहीं है ॥

जिन निवातकवचन बध्यौ कालकेय दिय दाहि ।
शिव तोख्यौ रन भूमि जिन ये कौरव कह ताहि ॥

अ॰ । वाह सुयोधन वाह ! क्यों न हो ।

लह्यौ बाहुबल जीति के जो तुव पुरखन राज ।
सो तुम जूआ खेलि के जीत्यौ सहित समाज ॥
अब भीलन की भांति दूमि छिपि के चोरत गाय ।
कुल गुरु ससि तुव नीचपन लखि के रह्यौ लजाय ॥

अमा॰ । देव !

जदपि चरित कुरु नाथ के ससि सिर देत झुकाय ।
तऊ रावरो विमल जस राखत ताहि उठाय ॥

अ॰ । (कुछ सोचकर) कुमार नगर के पास धरे हुए शस्त्रों को लेने रथ पर बैठकर गया है सो अब तक क्यों नहीं आया?

(उत्तरकुमार आता है)

कु॰ । देव आप की आज्ञानुसार सब कुछ प्रस्तुत है अब आप रथ पर विराजिए ॥

अ॰ । (शस्त्र बांधकर रथ पर चढ़ना नाट्य करता है)

अमा॰ । (विस्मय से अर्जुन को देखकर)

रत्नभूषन भूषित सुतन गत दूखन सब गात ।

सरद सूर सम घन रहित सूर प्रचंड लखात ॥

(नायक से)

दच्छिन कुम्भहि अरद्दि हय गरजहिं मेघ समान ।
उड़ि रथ धुज आगे बढ़हिं तुव जस विजय निसान ॥

अ॰। अमात्य! अब हम लोग गऊ छुड़ाने जाते हैं आप नगर में जाकर गो हरण से व्याकुल नगर वासियों को धीरज दीजिए ॥

अमा॰। महाराज जो आज्ञा (जाता है)

अ॰। (कुमार से) देखो गऊ दूर न निकल जाने पावें घोड़ों को कस के हांको ॥

कु॰। (रथ हांकना नाट्य करता है)

अ॰। (रथ का बेग देखकर)

लीकहु नहि लखिपरत चक्र की ऐसे धावत ।
दूर रहत तरु वृन्द छनक में आगे आवत ॥
जदपि वायु बल पाइ धूरि आगे गति पावत ।
पै हय निज खुर बेग पीछहीं मारि गिरावत ॥
खुर अरविंद महि छूमहिं मनहु धाइ चलहिं जव बेग गति ।
मनु होड़ जीत निज चरन सों आगेहि मुख बढ़िजात अति ॥

(नेपथ्य की ओर देखकर) अरे अरे अहीरो सोच मत करो क्योंकि

जबलौं बछरा करुना करि मांहि तृन नहिं खैहैं ।
तबलौं जननी बाट देखि के नहिं डकरैहैं ॥
जबलौं पय पीअनहित ते नहिं व्याकुल ह्वैहैं ।
ताके पहिलेहि गाय जीति के हम ले ऐहैं ॥

(नेपथ्य में) बड़ी कृपा है॥

कु॰। महाराज! अब लेलिया है कौरवों की सेना को क्योंकि

हय खुररज सों नभ छयो वह आगे दरसात।
मनु प्राचीन कपोतगल सान्द्र सुरुचि सरसात॥
करिवर मद धारा लिये रमत रसिक जो पौन।
सोई केलिमद गंधलै करत इतैही गौन॥

अ॰। यह देखो कौरवों की सेना दिखा रही है॥

चपल चंवर चहुंओर चलहिं सित छत्र फिराहीं।
उड़हिं गीधगन गगन जबै भाले चमकाहीं॥
घोर संखके शब्द भरत बन मृगन डरावति।
यह देखो कुरुसैन सामने धावति आवति॥

(बांह की ओर देखकर उत्साह से)

बनबन धावत सदा धूर धूसर जो सोहीं।
पंचाली गल मिलन हेतु अबलौं ललचौंहीं॥
जो जुवती जन बाहु बलय मिलि नाहिं लजाहीं।
रिपुगन! ठाढ़े रहो सोई मम भुज फरकाहीं॥

(नेपथ्य में)

फेरत धनु टंकारि दरप शित्र सम दरसावत।
साहस को मनु रूप काल सम दुसह लखावत॥
जय लक्ष्मी सम वीर धनुष धरि रोस बढ़ावत।
को यह जो कुरुपतिहि गिनत नहिं इतहीं आवत॥

(दोनो कान लगाकर सुनते हैं)

कु॰। महाराज यह किस के बड़े गम्भीर बचन हैं॥

अ॰। हमारे प्रथम गुरु कृपाचार्य्य के ॥

(फिर नेपथ्य में)

शिव तोषन खांडव दहन सोई पांडव नाथ।
धनु खींचत घट्टा पड़े जूझे जाके हाथ ॥
छूटि गये सब शस्त्र तबौं धीरज उर धारे।
बाहु मात्र अवशेष दुगुन हिय क्रोध पसारे ॥
जाहि देखि निज कपट भूलि हूं प्रगट पुरारी।
साहस पै बहु रीझि रहे आपुनपौ हारी ॥

अरे यह निश्चय अर्जुन ही है क्योंकि

सागर परम गंभीर नघ्यो गोपद सम छिन मैं।
सीता विरह मिटावन की अद्भुत मति जिन मैं ॥
जारी जिन तृन फूस हूस सी लंका सारी।
रावन गरब मिटाइ हने निसिचर बल भारी ॥
श्रीराम प्रान सम बीर बर भक्त राज सुग्रीव प्रिय।
सोइ वायु तनय धुज बैठि कै गरजि डरावत शत्रु हिय ॥

(दोनों सुनते हैं)

कु॰। आयुष्मान्

भरी बीर रस सों कहत चतुर गूढ़ अति बात।
पक्षपात सुत सो करत को यह तुम पैं तात ॥

अ॰। कुमार! यह तो ठीक ही है, पुत्र का पक्षपात करता है यह क्यों कहते हो! मैं आचार्य्य का तो पुत्र ही हूं।

(नेपथ्य में)

करन! गहौ धनु बेग, जाहु नृप! आगे धाई।
द्रोन! अस्त्र भृगुनाथ लहे सब रहौ चढाई ॥

अश्वत्थामा! काज सबै कुरुपति को साधहु।
दुरमुख! दुस्सासन! विकर्ण! निज व्यूहन बांधहु॥
गंगासुत शान्तनुतनय वर भीष्म क्रोध सों धनु गहत।
लखि शिव शिखित रिपु सामुहे तानि बान छांड़ो चहत॥

अ॰। (आनन्द से) अहा! यह कुरुराज अपनी सैन्य को बढ़ावा दे रहा है।

कु॰। देव! मैं कौरव योधाओं का स्वरूप और बल जानना चाहता हूं।

अ॰। देखो इसके ध्वजा के सर्प के चिन्ह ही से इसकी टेढ़ाई प्रगट होती है।

चन्द्र बंश को प्रथम कलह अंकुर एहि मानो।
जाके चित सौजन्य भाव नहिं नेकु लखानो॥
विष जल अगिन अनेक भांति हमको दुख दीनो।
सो यह आवत ढीठ लखो कुरुपति मति हीनो॥

कु॰। और यह उसके दाहिनी ओर कौन है।

अ॰। (आश्चर्य से)

जिन हिडम्ब अरि रिसि भरे लखत लाज भय खोय
कृष्णापट खींच्यो निलज यह दुस्सासन सोय॥

कु॰। अब इससे बढ़ कर और क्या साहस होगा।

अ॰। इधर देखो (हाथ जोड़ कर प्रणाम करके)

कंचन बेदी बैठि कद्रोपन प्रगट दिखावत।
सूरज को प्रतिबिंब जाहि मिलि काल लजावत॥
अस्त्र उपनिषद भेद जानि भय दूर भजावत।

कौरव कुल गुरु पूज्य द्रोन आचारज आवत ॥

कु० । यह तो बड़े महानुभाव से जान पड़ते हैं ।

अ० । इधर देखो ।

सिर पै बांकी जूट जटा मंडित छबि धारी ।
अस्त्र रूप मनु आप दूसरो दुखद मुरारी ॥
शत्रुन कों नित अजय मित्र को पूरन कामा ।
गुरु सुत मेरो मित्र लखो यह अश्वत्थामा ॥

कु० । हां और बताइये ।

अ० । धनुर्वेद को सार जिन घट भरि पूरि प्रताप ।
कनक कलशकरि धुज धस्यो सो कृप कुरु गुरु आप ।

कु० । और यह कुरुराज के सामने लड़ाई के हेतु फेंट कसे कौन खड़ा है ।

अ० । (क्रोध से)

सब कुरुगन को अनय बीज अनुचित अभिमानी ।
भृगुपति छलि लहि अस्त्र वृथा गरजत अघखानी ॥
सूत सुअन बिनु बात दरप अपनो प्रगटावत ।
इन्द्रशक्ति लहि गर्व्वे भरो रन कों इत आवत ॥

कु० । (हंस कर) इनका सब प्रभाव घोष यात्रा में प्रगट हो चुका है (दूसरी ओर दिखा कर) यह किसका ध्वजा है ।

अ० । (प्रणाम करके)

परतिय जिन कबहूं न लखी निज ब्रतहि दृढ़ाई ।
श्वेत केस मिस सों कीरति मनु तन लपटाई ॥
परशुराम को तोष भयो जा सर के त्यागे ।

तीन पितामह भीष्म लखै यह आवत आगे ॥

सूत। घोड़ों को बढ़ाओ

(नेपथ्य में)

समर विलोकन कों जुरे चढ़ि विमान सुर धाइ।
निज बल आजु विचित्रता अरजुन देहु दिखाइ॥

(इन्द्र, विद्याधर और प्रतिहारी आते हैं)

इन्द्र। आश्चर्य्य से

बालकु सों झगरै बली तौ निबलन भय होय।
तौ यह दारुन युद्ध लखि क्यों न डरै जिय खोय॥
एक रथी इक ओर उत बली रथी समुदाय।
तोहूं सुत तू धन्य अरि इकलो देत भजाय॥

कु०। (आगे देख कर) देव कौरवराज यह चले आते हैं।

प्र०। तो सब मनोरथ पूरे हुए।

(रथ पर बैठा दुर्योधन आता है)

दु०। (अर्जुन को देख कर क्रोध से)

बहु दुख सहि बनबास करि जीवन सों अकुलाय।
मरन हेतु आयो इतै इकलो गरब बढ़ाय॥

अ०। (हंस कर)

कालकेय बधिकै निवातकवचन कहं मारयो।
इकले खांडव दाहि उमापति युद्ध प्रचारयो॥
इकले ही बल कृष्ण लखत भगिनी हरि लीनी।
अरजुन की रन मांहि सदा इकलो गति लीनी॥

दु०। अब हंसने का समय नहीं है क्योंकि अंधाधुंध घोर संग्राम का समय है।

अ॰ । (हंसकर)

दूर रहौ कुरुनाथ मांहि यह छल जूआ दल ।
पापी गन मिलि द्रौपदि को दासी कीनी छल ॥
यह रण जूआ जहां बान पासे हम डारैं ।
रिपु गन सिर की गोंट जीति अपुने बल मारैं ॥

दु॰ । (क्रोध से)

चूड़ी पहिरन सों गयो तेरो शर अभ्यास ।
नर्त्तन शाला जात किन दूत पौरुष परकास ॥

कु॰ । (मुंह चिढ़ा कर) आर्य्य यह आप ठीक कहते हैं कि इनका बहुत दिन से धनुष चलाने का अभ्यास छूट गया है।

जब बन में गन्धर्व गनन तुमको कसि बांध्यो ।
तब कोर अग्रज नेह गरजि जिन तहं सर साध्यो ॥
लीन्हे तुम्हें छुड़ाइ जीति सुर गन छिन मांहीं ।
तब तुम शर अभ्यास लख्यो बिह्वल ह्वै नाहीं ॥

विद्या॰ । देव यह बालक बड़ा ढीठा है

इं॰ । क्यों न हो राजा का लड़का है

दु॰ । सूत! ब्राह्मणों की भांति इस कोरी बकवाद से फल क्या है। यह पृथ्वी ऊंची नीची है इस्से तुम अब समान पृथ्वी पर रथ ले चलो।

अ॰ । जो कुमराज की इच्छा (दोनों रथ जाते हैं)

विद्या॰ । (अर्जुन का रथ देखकर) देव!

तुव सुत रथ हय खुर चली समर धूरि नभ जौन
अरि धरती मन्थन अगिनि धूम लेख सी तौन

इं॰ । क्यों न हो तुम महा कवि हो ।

विद्या॰ । देव! देखिए अर्जुन के पास पहुंचते ही कौरवों में कैसा कोलाहल पड़गया देखिए ।

हय हिनहिनात अनेक गज सर खाइ घोर चिक्कारहीं ।
बहु बजहिं बाजे मार अरु धुनि झपटि बीर उचारहीं ॥
टंकार धनुकी होत घंटा बजहिं सर संचारहीं ।
सुनि सबद रन को बरन पति सुरबधू तन सिंगारहीं ॥

प्रति॰ । देव! केवल कोलाहल ही नहीं हुआ बरन आप के पुत्र के उधर जाते ही सब लोग लड़ने को भी एक संग उठ दौड़े, देव! देखिए अर्जुन ने कान तक खींच खींच कर जो बान चलाए हैं उस्से कौरव सेना में किसी के अंग भंग हो गए हैं किसी के धनुष दो टुकड़े हो गए हैं किसी के सिर कट गए हैं किसी की आंखें फूट गई हैं किसी की भुजा टूट गई हैं किसी की छाती घायल होरही है ।

इन्द्र । (हर्ष से) वाह बेटा अब लेलिया है ।

विद्या॰ । देव देखिए देखिए ।

गज जूथ सोई घन घटा मद धार धारा सरसजे ।
तरवार चक्कनि बीजु की दमकनि गरज बाजन बजे ॥
गोली चलें जुगनू सोई बक वृन्द ध्वजा बहु सोहई ।
कातर बियोगिन दुखद रन की भूमि पावस नभ भई ॥
तुव सुत सर सहि मद्र गलित दन्त केतको सोय ।
घायल गज जिनकों लखें हथिनी को भ्रम होय ॥

इन्द्र॰ । (सन्तोष से)

हर सिच्छित सर रीति जिन आलकेय कियदाहि ।
सो जदुनाथ सनाथ कहं कौरव जीतन ताहि ।

प्रति॰ । महाराज देखें ।

कटे कुंड सुंडन के रुंड में लगाय तुंड भुंड भुंड पान करैं लेहू भूत चेटी हैं । घोड़न चबाई धरखीन सों अघाय मेटी भूख सब मरे मुरदान मैं समेटी हैं ॥ लाल अंगे कीने सीस हाथन में लीने अस्थि भूखन नवीने आंत जिनपै लपेटी हैं । हरख बढ़ाय आगु-रीन के नचाय पियें सोनित पियासी सी पिसाचन की बेटी हैं ॥

विद्या॰ । देव देखिये ।

हिलन धुजा सिर ससि चमक मिलि कै ब्यूह लखात ।
तुव सुत सर लगि घूमि जब गज गन मंडल खात ॥

इन्द्र॰ । (आनन्द से देखता है)

प्रति॰ । देव देखिए देखिए आप के पुत्रके धनुष से छूटे हुए बानों से मनुष्य और हाथियों के अंग कटने से जो लहू की धारा निकलती है उसे पीपी कर यह जोगिनियें आप के पुत्र ही की जीत मनाती हैं ।

इन्द्र । तो जय ही है क्योंकि इनकी असीस सच्ची है ।

विद्या॰ । (देखकर) देव अब तो बड़ा ही घोर युद्ध हो रहा है देखिए ।

विरचि नली गज सुंड की काटि काटि भट सीस ।
रुधिर पान करि जोगिनी जियपहि देहिं असीस ॥
टूटि गईं दोउ भोंह स्वेद सों तिलक मिटाए ।
नयन प्रसारे लाल क्रोध सों ओठ चबाए ॥

कटे कुंडलन मुकुट छिना शीहल दरसाए ॥
वायु वेग बस केस मूंछ दाढ़ी फहराए ।
तुव तनय बान लगि चेरि सिर एहि विधि सों नभ में फिरत ।
तिन संग काक अरु बंक बहु रंक भए धावत गिरत ॥

(बड़े आश्चर्य्य से इधर उधर देखकर) देव देखिए ।

सीस कटे भट सोहहीं नैन जुगल बल लाल ।
बरहिं तिनहिं नाचहिं हंसहिं भाखहिं नभ सुर बाल ॥

इन्द्र । (हर्ष से) मैं क्या क्या देखूं मेरा जी तो आवला हो रहा है ।

इत लाखन कुरु संग लरत इकलो कुंती नंद ।
उत बीरन कों बरन कों लरहिं अप्सरा वृंद ॥

विद्या॰ । ठीक है (दूसरी ओर देखकर) देव! इधर देखिए ।

लपटि झपटि चहुं दिसन आग वन जीव जरावत ।
ज्वाला माला लोल लहर धुज सी फहरावत ॥
परम भयानक प्रगट प्रलय सम समय लखावत ।
गंगा सुत क्रत अगिनि अस्त्र उमग्यो ही आवत ॥

प्रति॰ । देव! मुझे तो इस कड़ी आंच से डर लगती है ।

विद्या॰ । भद्र! व्यर्थ क्यों डरता है भला अर्जुन के आगे यह क्या है? देख ।

अरजुन ने यह बरुन अस्त्र जो बेग चलायो
तासों नभ में घोर घटा को मंडल छायो ॥
उमडि उमडि करि गरज बीजुरी चमकि डरायो
मुसलधार जल बरसि छिनक में ताप बुझायो ॥

इन्द्र। बालक बड़ा ही प्रतापी है।

प्रति०। देव! राधेय ने यह भुजगास्त्र छोड़ा है देखिए अपने मुखों से आग सा विष उगलते हुए अपने सिर की मणियों से चमकते हुए इन्द्रधनुष से पृथ्वी को व्याकुल करते हुए देखने ही से वृक्षों को जलाते हुए यह कैसे कैसे डरावने सांप निकले चले आते हैं।

विद्या०। दुष्ट मनोरथ सरिस लसैं लांबे दुखदाई।
टेढ़े जिमि खल चित्त भयानक रहत सदाई॥
वमत वदन विष निन्दक सो मुख कारिख लाए।
अहिगन नभ मैं लखहु धाइ कै चहुं दिस छाए॥

इन्द्र। क्या खांडव बन का वैर लेने आते हैं?

विद्या०। आप शोच क्यों करते हैं देखिये अर्जुन ने गारुडास्त्र छोड़ा है।
निज कुल गुरु तुव पुत्र सारथिहि तोष बढ़ावत।
झपटि दपटि गहि अहिन टूक करि नास मिलावत॥
बादर से उड़ि चोंखि चोंखि दोउ पंख हिलावत।
गरुड़न को गन गगन छयो अहि हियो डरावत॥

इन्द्र। (हर्ष से) हां तब

प्रति०। देखिये यह दुर्योधन के वाक्य से पीड़ित हो कर द्रोणाचार्य ने आप के पुत्र पर वारणास्त्र छोड़ा है।

विद्या०। (देखकर) वैनायक अस्त्र चल चुका, देखिए।
रंगे गंड सिंदूर सों घहरत घंटा घोर।
निज मद सों सींचत धरनि गरजि चिकारहिं जोर॥
सूंड फिरावत सीकरन धावत भरे उमंग।

छावत आवत घन सरिस मरदत मनुज मतंग ॥

इन्द्र । तब तब

विद्या० । तब अर्जुन ने नरसिंहास्त्र छोड़ा है देखिए ।

गरजि गरजि जिन छिन मैं गर्भिनि गर्भ गिरायो ।
काल सरिस मुख खोलि दांत बाहर प्रगटायो ॥
मारि थपेड़न गंड मुंड को मांस चबायो ।
उदर फारि चिक्कारि रुधिर पीसरा चलायो ॥
करि नैन अगिनि सम मोछ फहराइ पोंछ टेढ़ी करत ।
गल केसर लहरावत चल्यौ क्रोधि सिंहदल दल दलत ॥

इन्द्र । तो अब जय होने में थोड़ी ही देर है ।

विद्या० । देव! कहिए कि कुछ भी देर नहीं है ।

गंगा सुत के बधि तुरग द्रोन सूत हति खेत ।
करन रथहि करि खंड बहु छप कहं कियो अचेत ॥
और भजाई सैन सब द्रोनसुवन धनु काट ।
तुव सुत जोहत अब खड़ा दुरजोधन की बाट ॥

प्रति० । दुर्योधन का तो बुरा हुआ ।

विद्या० । नहीं

व्याकुल तुव सुत बान सों विमुख भयो रनकाज ।
मुकुट गिरन सों क्रोध करि फिर्यो फेर कुरुराज ॥

(नेपथ्य में)

सुन सुन कर्ण के मित्र ।

संभा मांहि लखि द्रौपदिहि क्रोध अलिहि जिय लेत ।
अयज परतिज्ञा करी तुव उरु तोड़न हेत ॥

ताही सों तोहि जाहि बच्यौ न तब आवै कुरु ईस ।
जा सर सों तोस्यौ मुकुट तासों हरतो सीस ॥

प्रति॰ । देव अपने पुत्र का वचन सुना ।

इन्द्र । (विस्मय से)

दैव भए अनुकूल तें सबही करत सहाय ।
भीम प्रतिज्ञा सों बच्यौ अनायास कुरुराय ॥

विद्या॰ । देव ! दुर्योधन के मुकुट गिरने से सब कौरवों ने क्रोधित होकर अर्जुन को चारो ओर से घेर लिया है ॥

इन्द्र । तो अब क्या होगा ।

विद्या॰ । देव अब आप के पुत्र ने स्वप्नास्त्र चलाया है ।

नाक बोलावत धनु लिए तकिया मूंदे नैन ।
सब अचेत सोए भए मुरदा सी कुरु सैन ॥

इन्द्र । युद्ध से थके वीरों को सोना योग्य ही है । हां फिर

विद्या॰ । एक पितामह छोड़ि कै सब को नांगो कीन ।
बांधि अंधेरी आंख में मूड़ि तिलक सिर दीन ॥
अब जागे भागे लखौ रह्यौ न कोऊ खेत ।
गोधन लै तुव सुत आवै ग्वालन देखौ हेत ॥
शत्रु जीति निज मित्र को काज साधि सानन्द ।
पुरजन सों पूजित लखौ पुर प्रविसत तुवनन्द ॥

इन्द्र । जो देखना था वह देखा ।

(रथ पर बैठे अर्जुन और कुमार आते हैं)

अ॰ । (कुमार से) कुमार ।

H 891.22/KA22

जो मो कहं आनंद भयो करि कौरव बिनु सेस ।
तुव तनको बिनु घाव लखि तासों मोद विसेस ॥

कु॰ । जब आप सा रक्षक हो तो यह कौन बड़ी बात है ।

इन्द्र । (आनन्द से) जो देखना था वह देख चुके ।

(विद्याधर और प्रतिहारी समेत आता है)

अ॰ । (सन्तोष से) कुमार ।

करी बसन बिनु द्रौपदी इन सब सभा बुलाय ।
सो हम इनको वस्त्र हरि बदलो लीन्ह चुकाय ॥

कु॰ । आप ने सब बहुत ठीक ही किया क्योंकि ।

बरु रन मैं मरनों भलो पाछे सब सुख सोव ।
निज अरिसों अपमान हिय खटकत जबलों जीव ॥

अ॰ । (आगे देख कर) अरे अपने भाइयों और राजा विराट सहित आर्य्य धर्म्मराज इधर ही आते हैं ।

(तीनो भाई समेत धर्मराज और विराट आते हैं)

धर्म्म॰ । मत्स्यराज! देखिये ।

धूर धूसरित अलक सब मुख श्रमकन झलकात ।
असम समर करि थकित पै जय सोभा प्रगटात ॥

विरा॰ । सत्य है ।

द्विज सोहत विद्या पढ़ें छत्री रन जय पाय ।
लक्ष्मी सोहत दान सों तिमि कुल वधू लजाय ॥

अ॰ । (घबड़ा कर) अरे क्या भैया आ गए (रथ से उतर कर दंडवत् करता है)

सब । (आनन्द से एकही साथ) कल्यान हो—जीते रहो ।

धर्म्म॰ ।

6853 B (28-11-57)

इकले सिव घट पुर दह्यो निसचर मारे राम ।
तुम इकले जीत्यो कुरुन नहिं अब चौथो नाम ॥

प्र· । (सिर झुका कर हाथ जोड़ कर) यह केवल आप की कृपा है ।

विरा· । (नेपथ्य की ओर हाथ से दिखा कर) राज पुत्र देखो ।

मिलि बछरन सों धेनु सब अवहिं दूध की धार ।
तुव उज्जल कीरति मनहुं फैलत नगर मंझार ॥

और

खींच्यो कृष्णा केस जो समर मांहि कुरुराज ।
सो तुम मुकुट गिराइ के बदलो लीन्हों आज ॥

भीम । (सुन कर क्रोध से) राजन् अभी बदला नहीं चुका क्योंकि ।

तोरि गदा सों हृदय दुष्ट दुस्सासन केरो ।
तासों ताज़ो सद्य रुधिर करि पान घनेरो ॥
ताही करसों कृष्णा की बेनी बंधवाई ।
भीमसेन ही सो बदलो लैहै चुकवाई ॥

धर्म· । बेटा तुम्हारे आगे यह क्या बड़ी बात है ।

सौगन्धिक तोर्‌यो कनक कियो हिड़म्बहि घात ।
हन्यो बकासुर जिन सहज तेहि केती यह बात ॥

भीम· । (विनय से) महाराज सुनिए अब हम क्षमा नहीं कर सकते ।

धर्म· । बेटा क्षमा के दिन गए युद्ध के दिन आए अब इतना मत घबड़ाओ ।

विरा· । (युधिष्ठिर से)

तुव सरुप जाने बिना लियो अनेकन काज ।
जोग अजोग अनेक बिध सो छमिये महराज ॥

अ॰ । राजन् यह उपकारही हुआ अपकार कभी नहीं हुआ । क्योंकि ।

जो अजोग करते न हम सेवा है तुव दास ।
तौ कोउ बिधि छिपतो न यह मम अज्ञात निवास ॥

विरा॰ । (अर्जुन से) राजपुत्र

सात चरनहू संग चले मित्र भए हम दोय ।
तासों मांगत–उत्तरा पुत्रबधू तुव होय ॥

अ॰ । आप की जो इच्छा । क्योंकि ।

आपु आवती लच्छमी को मूरख नहिं लेत ।
सोऊ बिन मांगे मिलै तो केवल हरि हेत ॥

विरा॰ । और भी मैं आप का कुछ प्रिय कर सकता हूं ।

अ॰ । अब इस्से बढ़ कर क्या होगा ।

शत्रु सुजोधन सों लही करन सहित रन जीत ।
गाय फेरि लाए सबै पायो तुमसो मीत ॥
लही बधू सुत हित भयो सुख अज्ञात निवास ।
तौ अब का नाहिं हम लह्यौ जाकी राखैं आस ॥

तौभी यह भरत वाक्य सत्य हो

राज वर्ग मद छोड़ि निपुन विद्या मैं होई ।
आलस मूरखतादि तजैं भारत सब कोई ॥
पंडित गन पर कृति लखि कै मति दोष लगावैं ।
छुटै राज कर मेघ समै पै जल बरसावैं ॥

कजरी ठुमरिन सों मोरि मुख सत कबिता सब कोउ कहै।
हिय भोगवती सम गुप्त हरि प्रेम धार नितही बहै॥

और भी

"सौजन्यामृतसिन्धवः परहितप्रारब्धवीरव्रता:।
वाचालाः परवर्णने निजगुणालापे च मौनव्रताः॥
आपत्स्वप्यविलुप्तधैर्य्यनिचयास्सम्पत्स्वनुत्सेकिनो।
माभूवन् खलवक्त्रनिर्गतविषम्लानाननास्सज्जनाः" ॥

त्रिरा॰। तथास्तु।

(सब जाते हैं)

श्री धनंजय विजय नाम का व्यायोग श्रीहरिश्चन्द्र अनुवादि समाप्त हुआ॥

☞ विदित हो कि यह जिस पुस्तक से अनुवाद किया गया वह सम्वत् १५२७ की लिखी है और इसी से बहुत प्रमाणिक इससे इस के सब पाठ उसी के अनुसार रक्खे हैं।

National Library.
Calcutta